संगीत त्रिवेणी

(गायन-वादन-नर्तन)

उत्तर भारतीय संगीत (गायन, वादन, नृत्य) के विविध आयाम

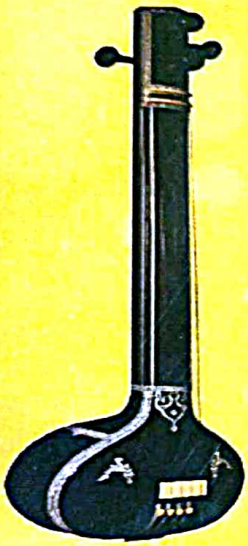

डॉ. आनंद तिवारी
प्राचार्य/संरक्षक

डॉ. हरिओम सोनी
सम्पादक

डॉ. अपर्णा चाचोंदिया
सम्पादक

आयोजक-संगीत एवं नृत्य विभाग

शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय सागर (म.प्र.)

प्रकाशक : रागी पब्लिकेशन एण्ड इंटरप्राइजेज
चैतन्य हास्पिटल के पास में, सैनी के कुआँ के सामने,
वृन्दावन वार्ड, तिली रोड, सागर (म.प्र.)
ई मेल : ragipublicationandenterprises@gmail.com
सम्पर्क : 9039515004

प्रकाशन वर्ष : 2023

संस्करण : प्रथम

मूल्य : 300/-

सम्पादक मंडल :
डॉ. हरिओम सोनी
डॉ अपर्णा चाचोंदिया

Book Name-Sangeet Triveni
ISBN.No.-978-93-340-4240-5

अक्षर संयोजन एवं मुद्रण
रॉयल कम्प्यूटर्स,
वनवे परकोटा रोड, सागर (म.प्र.)
मो. : 9425452106

नोट–प्रस्तुत प्रोसिडिंग में शामिल किये गए समस्त शोध पत्रों की सामग्री एवं तथ्यों की सम्पूर्ण जबाबदारी लेखकों की होगी इस हेतु सम्पादक या समिति किसी प्रकार से जिम्मेदार नहीं होगी।

अनुक्रमणिका

क्र	विषय	पृष्ठ
1.	भारतीय राग चिकित्सा – समालोचनात्मक विश्लेषण **डॉ. अवधेश प्रताप सिंह तोमर**	01
2.	नृत्यकला एवं रासलीला **डॉ. अपर्णा चाचोंदिया**	07
3.	वर्तमान परिवेश में संगीत घरानों की प्रासंगिकता **डा. प्रेम कुमार चतुर्वेदी**	11
4.	विकसित अवनद्य वाद्य – तबला (एक दृष्टिपात) **डॉ. विभूति मलिक**	17
5.	नृत्य कला में नायिका भेद **प्रो. डॉ. नीता गहरवार**	22
6.	संगीत में घराने – गुण एवं दोष **प्रो. डॉ. अलकनंदा पलनीटकर**	26
7.	गुप्त कालीन संगीत, गायन एवं वादन **प्रॉफसर नवीन गिडियन**	30
8.	बंदिश एवं नवसृजन **पंडित देवेन्द्र वर्मा**	34
9.	हिन्दी के गीतों में संगीत **डॉ. नरेन्द्र सिंह ठाकुर,**	43
10.	देश के सामाजिक आर्थिक विकास में संगीत कलाकारों की भूमिका **प्रोफेसर नित्यानंद चौधरी**	46
11.	प्राचीन ताल पद्धति का विश्लेषणात्मक विवेचन **डॉ. गुलशन सक्सेना**	51
12.	ताल के दस प्राण **हरविंदर बीर कौर**	55
13.	संगीत, संस्कृति और समाज **डॉ. मालती दुबे**	59
14.	संगीत कला का व्यवसायीकरण **डॉ. प्रियंका शेण्डे**	61
15.	कत्थक नृत्य में नायिकाओं की अष्टावस्था **प्रो. वन्दना चौबे**	65

16. कला का व्यवसायीकरण और सोशल मीडिया की भूमिका 72
एक विश्लेषणात्मक अध्ययन
डॉ. रश्मि शर्मा

17. संगीत संस्कृति और समाज 78
डॉ. डी.के. गुप्ता

18. मानव जीवन में संगीत और स्वास्थ्य 80
श्रीमती रागिनी श्रीवास्तव

19. भारतीय संगीत के विविध आयामों में महिलाओं की स्थिति और भूमिका 84
प्रीति वर्मा

20. विभिन्न संगीत शैलियों के साथ विभिन्न तालों का सामांजस्य 88
शैलेन्द्र सिंह राजपूत

21. संगीत में अवनद्ध वाद्यों का विकास एवं महत्व संदर्भ–तबला 92
शैलेन्द्र वर्मा/डॉ. रवि कुमार पण्डोले

22. भारतीय संगीत गायन के विविध आयाम 96
डॉ. जितेन्द्र कुमार शुक्ला

23. हिन्दी साहित्य में चौमासा (आषाढ़, सावन, भाद्रपद, अश्विन) 100
लोक, ललित का मूल आधार
राघवेन्द्र प्रताप सिंह/डॉ. सुजीत देवघरिया

24. युवा पीढ़ी का पाश्चात्य संगीत की ओर रूझान 106
कृष्ण कुमार कटारे

25. महिलाओं से संबंधित मनोविकारों के निवारण में 108
संगीत चिकित्सा की प्रासंगिकता
वर्षा मीणा/डॉ. संतोष मीणा

26. भारतीय रंगमंच का स्वरूप एवं सांस्कृतिक परंपरा 114
अंजलि वर्मा

27. तबले की उपशास्त्रीय वादन शैली 117
डॉ राहुल स्वर्णकार

28. बुन्देली लोकगीतों में सांस्कृतिक चेतना 123
डॉ. सरिता जैन

29. मनोचिकित्सा में संगीत का प्रयोग 125
डॉ. हरीश वर्मा

30. अभ्यास एवं साधना (आध्यात्मिक अध्ययन) 128
आकाश जैन

31. सितार वादन करने हेतु तकनीक का महत्व–एक अध्ययन 132
डॉ. अमनदीप कौर

गुप्त कालीन संगीत, गायन एवं वादन

प्रॉफसर नवीन गिडियन

अध्यक्ष – इतिहास विभाग

शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय सागर (म.प्र.)

मौर्य साम्राज्य के पतन के पश्चात् लगभग पाँच सौ वर्षों तक उत्तर भारत में किसी भी शक्तिशाली राज्य का पता नहीं चलता। मौर्यों के ह्रास के साथ देश अनेक राजतान्त्रिक और जनतान्त्रिक (गण एवं नगर) राज्यों के रूप में विघटित हो गया। उनकी घटती–बढ़ती शक्ति ही इस काल की विशेषता कही जा सकती है। कुछ काल के लिए मध्यप्रदेश में शृंग सत्ताधारी हुए, पंजाब में विदेशी आक्रामकों––बाख्त्री–यवन, पह्लव और शकों ने अपना अधिकार जमाया। उनके बाद कुशाणों के सम्बन्ध में अनेक लोगों की धारणा है कि उन्होंने एशियाई इतिहास में महत्तम सफलता प्राप्त की थी। कहा जाता है कि उनका साम्राज्य पश्चिम में भारत की परिधि के बाहर दूर तक और पूरब में बंगाल की खाड़ी तक फैला हुआ था,1 किन्तु इसकी सत्यता सन्दिग्ध है। यह सन्दिग्ध न भी हो तब भी, यह तो सत्य है ही कि कुशाण साम्राज्य एक शती से अधिक टिक न सका।

अस्तु, उत्तर–पश्चिम से निरन्तर होने वाले आक्रमणों के कारण भारतीय जनता ने शीघ्र ही एक ऐसे शक्तिशाली शासन की आवश्यकता का अनुभव किया जो इस उपद्रव को रोकने में समर्थ हो। फलतः हम देखते हैं कि तीसरी शताब्दी ई. के उत्तरार्ध में देश के तीन कोनों से तीन शक्तिशाली राज्यों का उदय हुआ। मध्य देश के पश्चिमी भाग में नाग अथवा भारशिव उठे। उन्होंने अपने सतत संघटित प्रयत्नों से भारत स्थित कुशाण–साम्राज्य को चूर–चूर कर दिया। उनका दावा है कि उन्होंने गंगा तक फैली सारी भूमि को अपने अधिकार में कर लिया था और दस अश्वमेध यज्ञ किये थे।2

दक्षिण में वाकाटकों का उदय हुआ। उन्होंने न केवल दक्षिणी पठार में अपने राज्य का विस्तार किया वरन् विन्ध्य के उत्तर में भी, काफी बड़े भूभाग पर उनका प्रभाव था।

तीसरी शक्ति का उदय पूर्व में हुआ। वह शक्ति गुप्तों की थी। वे पूर्वी उत्तर प्रदेश के एक कोने से छोटे से राज्य के रूप में उदित हुए और अपने युग की महत्तम शक्ति कहलाने का गौरव प्राप्त किया। उनके साम्राज्य के अन्तर्गत विन्ध्य के उत्तर का सारा भूभाग समाहित था और दक्षिण पर भी उन्होंने अपना प्रभाव डाल रखा था।

भारशिव, वाकाटक और गुप्त तीनों ही देश की उभरती हुई शक्तियाँ थीं: किन्तु आश्चर्य की बात है कि उनमें परस्पर प्रभुत्व की स्पर्धा के कोई चिह्न दिखाई नहीं देते।

वाकाटक सहज भाव से अपने उत्थान का श्रेय भारशिवों को देते हैं।3 ऐसा प्रतीत होता है कि भारशिवों ने वाकाटक से साथ अपने को आत्मसात कर दिया और शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में उभरने में उनकी सहायता की। गुप्त और वाकाटक दोनों ही सहज रूप में एक दूसरे के शत्रु बन कर एक दूसरे के लिए स्थायी रूप से घातक हो सकते थे, किन्तु उन दोनों के बीच भी हम सौहार्द्र सम्बन्ध पाते हैं।4 इस

प्रकार आन्तरिक शान्तिमय वातावरण के बीच गुप्तों ने अपने विशाल साम्राज्य की स्थापना की और दो शताब्दियों से अधिक काल तक अपनी सत्ता बनाये रखने में समर्थ हुए।

वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र में 66 कलाओं5 की एक ऐसी सूची प्रस्तुत की है। जिनसे परिचित होना उन्होंने नागरिकों के लिए आवश्यक माना है। उनकी यह सूची इस प्रकार है — (1) गायन, (2) वादन, (3) नर्तन, (4) अभिनय, (5) आलेख्य (चित्र रचना), (6) विशेषक अर्थात् मुखादि पर पत्र–लेख रचना, (7) तन्दुल–कुसुम–अवली विकार—अल्पना (चौक पूरना), (8) पुष्पास्तरण, (9) दशन–वसन अंगरागादि लेपन, (10) मणिभूमिकारकर्म–पच्चीकारी, (11) शयन रचना, (12) उदकवाद्य, कदाचित जलतरंग की तरह के वाद्य बनाना या बजाना, (13) उदकाघात अर्थात् जलक्रीड़ा, (14) चित्रयोग–रूप भरना (मेक–अप करना), (15) माला गूँथना, (16) शेखरापीड़योजन—मुकुट बनाना, (17) नेपथ्य प्रयोग, (18) कर्णाभूषण बनाना, (19) गन्धयुक्ति—सुगन्धित द्रव्य बनाना, (20) भूषणयोजन, (21) इन्द्रजाल (जादूगरी),(22) सौन्दर्य–योग,(23) हस्त–लाघव (हाथ की सफाई), (24) पाक–कार्य, (25) पानक–रस–राग–आसव–योजन–शराब बनाना, (26) सूची–कर्म (सिलाई), (27) सूत्र–क्रीड़ा—कलाबत्तूका काम, (28) वीणा–डमरू–वाद्य, (29) पहेली, (30) प्रतिमाल, (31) दुर्वाच्योग—बुझावल, (32) पुस्तक–वाचन, (33) नाटक, आख्यायिका–दर्शन (कदाचित अभिनय करना और कहानियोंको भावभंगिमाके साथ सुनाना), (34) काव्य–समस्या–पूर्ति, (35) पट्टिका वेत्रवान विकल्पवेंतकी बुनाई, (36) सूत कातना, (37) तक्षण (मूर्ति बनाना), (38) वास्तु–कला, (39) रूप–रत्न–परीक्षा, (40) धातु–वाद, (41) माणि–राग–आकर–ज्ञान–रत्नों की रंग–परीक्षा, (42) वृक्षायुर्वेद योग, (43) मेढ़ा, कुक्कुट, लवा आदि लड़ाना, (44) शुक–सारिका प्रलाप, (45) उत्सादन–सम्वाहन (मालिश करना), (46) केशमर्दन–कौशल, (47) अक्षरमुष्टिककथन, (48) म्लेच्छ विकल्प–विदेशी कलाओं का ज्ञान, (49) देशी बोलियों का ज्ञान, (50) पुष्पशतिका, (51) निमित्तयोजन—भविष्यकथन, (52) कठपुतली नचाना, (53) धारण मातृका ?, (54) सुन कर दुहराना, (55) मानसी काव्य क्रिया—आशु–काव्य, (56) अभिधान कोश (शब्द–ज्ञान), (57) छन्दयोजना, (58) क्रियाकल्प, (59) छलितक योग, (60) वस्त्र–गोपन—नकाब धारण करना (?), (61) द्यूत, (62) आकर्षण–क्रीड़ा (कदाचित रस्साकशी), (63) बाल–क्रीड़ा (बच्चों के साथ खेलना, (64) वैनयिकी–शिष्टाचार, (65) वैजयिकीवशीकरण और (66) व्यायाम।6

वात्स्यायन की इस कला–सूची में न केवल वे ही नाम हैं जिन्हें आज हम ललित–कला या ललित–शिल्प के नाम से पुकारते हैं, वरन् उसमें गृह–सज्जा, सौन्दर्य–प्रसाधन, खाना पकाना, खेलकूद आदि दैनिक, वैयक्तिक और पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित सामान्य कार्य, शिक्षा और ज्ञान से सम्बन्धी बातें और कुलागत अथवा पारिवारिक पेशे के रूप में ज्ञात सामान्य कौशल और शिल्प आदि का भी उल्लेख है। इस प्रकार वात्स्यायन की कला–परिभाषा अत्यन्त व्यापक है जिसके कारण सामान्यतः लोग उनकी इस कला–सूची को गम्भीरता से नहीं ग्रहण करते। वे उसे रूढ़िगत, परम्पराजनित सूची मात्र समझते हैं किन्तु यदि उस प्रसंग को ध्यान में रखते हुए, जिस प्रसंग में वात्स्यायन ने इस सूची का उल्लेख किया है, इस पर विचार किया जाय तो यह सहज अनुमान किया जा सकता है कि गुप्त–काल में लोग सम्भवतः छोटी–छोटी बातों में भी सौन्दर्य–सृष्टि की ओर सजग थे और वे जीवन की सभी दिशाओं में अपनी भावनाओं को कलात्मक रूप से सजीव, साकार और मौलिक अभिव्यक्ति के साथ प्रस्तुत करने को उत्सुक थे। वे अपने प्रत्येक कार्य को कला के रूप में ही देखने की चेष्टा करते थे। लोगों में प्रत्येक वस्तु को कलागत .ष्टि से देखने के भाव व्याप्त थे और जीवन की यह सुकुमारता (नजाकत) वात्स्यायन की कोरी कल्पना न थी यह पुरातात्विक अवशेषों और साहित्यिक वर्णनों से भली भाँति परिलक्षित होता है।

संगीत

गायन, वादन और नृत्य, संगीत के तीन मुख्य अंग कहे गये हैं और उनका पारस्परिक घनिष्ट सम्बन्ध है। गायन और वादन स्वतन्त्र भी होते हैं। पर उन दोनों का संयोग ही विशेष महत्त्व रखता है। इसी

प्रकार नृत्य के साथ भी गायन और वादन का घनिष्ट सम्बन्ध है। गुप्त–कालीन साहित्य में हँसी–खुशी, आमोद–प्रमोद की जहाँ भी चर्चा हुई है वहाँ संगीत के इन सभी रूपों का उन्मुक्त रूप से उल्लेख हुआ है। तत्कालीन साहित्य के देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि तत्कालीन नागरिक जीवन संगीत से आप्लावित था। संगीत चरम सुख का प्रतीक था और वह लोक–रंजन का प्रमुख साधन था। स्त्री–पुरुष सभी संगीत के प्रेमी थे और उसमें समान रूप से रस लेते थे। राज–घरानों में दिन–रात निरन्तर संगीत होता रहता था।7 नगर संगीत–ध्वनि से सदा प्रतिध्वनित होते रहते थे।8 नगरों में संगीत–शिक्षा के निमित्त संगीत–शालाएँ थीं9, जहाँ संगीताचार्य लड़के–लड़कियों को संगीत–कला की शिक्षा दिया करते थे। राजमहलों में इसकी स्वतन्त्र व्यवस्था होती थी।

गायन

गुप्त–कालीन गायन के रूप–स्वरूप पर प्रकाश डालनेवाला कोई सिद्धान्तग्रन्थ आज उपलब्ध नहीं है, पर कालिदास के उल्लेखों से ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय तक गायन ने एक व्यवस्थित सिद्धान्त का रूप धारण कर लिया था। मालविकाग्निमित्र के आरम्भिक दो अंकों के कथनोपकथनों में संगीत सम्बन्धी प्रविधि की पर्याप्त चर्चा है। उनसे ज्ञात होता है कि संगीतशास्त्री कतिपय–सिद्धान्तों का अनुसरण करते, उनको प्रमाण मानते तथा उनके अनुसार अपने गायन का प्रदर्शन करते थे। कालिदास ने अपनी रचनाओं में ताल, लय, स्वर, उपगान, मूर्च्छना आदि अनेक पारिभाषिक शब्दों का उल्लेख किया है। कई स्थलों पर राग की भी चर्चा है और संगीत के प्रसंग में उन्होंने सारंग, ललित आदि रागों के नाम भी दिये हैं। यही नहीं, उन्होंने बेसुरे राग को ताड़न के समान बताया है।10 राग से पूर्व, वर्ण–परिचय, स्वरालाप, तत्पश्चात् गायन की विधि की भी चर्चा की है।11 इनसे जहाँ तत्कालीन संगीत के प्राविधिक रूप का कुछ परिचय मिलता है, वहीं यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि कालिदास ने जहाँ भी गीतों का उल्लेख किया है, वहाँ उन्होंने प्रायः सभी गीत प्रा.त में दिये हैं।12 इनसे ऐसा अनुमान होता है कि प्राविधिक संगीत के साथ–साथ लोक–संगीत का भी व्यापक प्रचार था अथवा कदाचित दोनों में कोई विशेष अन्तर न था।

गायन के साथ–साथ वाद्य का भी प्रयोग होता था13 और गीत के साथ नृत्य का भी योग था, ऐसा मालविकाग्निमित्र14 से भासित होता है।

वादन

गायन के साथ–साथ वादन का उल्लेख प्रायः गुप्तकालीन साहित्य में मिलता है। कदाचित उन दिनों तन्त्रीगत वाद्यों में वीणा का ही प्रमुख रूप से प्रयोग होता था। कालिदास ने उसी का उल्लेख विशेष किया है।15 लोग प्रायः वीणा के साथ गायन करते थे। समुद्रगुप्त और प्रथम कुमारगुप्त, दोनों का ही अंकन उनके अपने एक भाँत के सोने के सिक्कों पर वीणावादक के रूप में हुआ है।16 वीणा के अतिरिक्त वल्लकी, परिवादिनी, तन्त्री आदि तन्त्रीगत वाद्यों का भी उल्लेख तत्कालीन साहित्य में मिलता है। सम्भवतः वे वीणा के ही रूप थे। तत्कालीन साहित्य में सुषिर वाद्यों के रूप में वेणु (बाँसुरी)17, कीचक18, शंख19 और तूर्य20 का उल्लेख हुआ है। शंख और तुर्य मांगलिक अवसरों तथा रण के समय काम आते थे। संगीत–साधन के रूप में कदाचित् उनका प्रयोग नहीं होता था। लोक–रंजन के रूप में वेणु का ही उपयोग होता था। कीचक भी कदाचित् वेणु की ही भाँति का कोई वाद्य था जिसका वास्तविक रूप अभी तक नहीं जाना जा सका है। अनुमान किया जाता है कि वह वायु के प्रवाह से अपने–आप बजनेवाला वाद्य था। चर्मवाद्यों में मुरज21, पुष्कर22, मृदंग23, दुन्दुभि24, मर्दल25 आदि का उल्लेख मिलता है। इनमें परस्पर किस प्रकार का भेद था, यह किसी प्रकार ज्ञात नहीं है। भूमरा के शिव–मन्दिर के फलकों पर शिव के गण अनेक प्रकार के वाद्य बजाते अंकित किये गये हैं। उनमें चर्मवाद्यों के तीन रूप प्रकट होते हैं। एक तो छोटा और दूसरा लम्बा है

और वे ढोल की तरह कन्धों से लटक रहे हैं। ये दोनों ही गोलाकार हैं। तीसरा वाद्य लम्बा और दोनों छोरों पर चौड़ा है, पर वह बीच में पतला है। उसका आकार कुछ डमरू–सा है। इन चर्मवाद्यों के अतिरिक्त शिव–गण भेरी, झाल आदि बजाते भी दिखाये गये हैं।26 अजन्ता की 17वीं गुफा में भी अनेक वाद्य–यन्त्रों का अंकन हुआ है। उनसे तत्कालीन वाद्य–रूपों का बहुत कुछ अनुमान किया जा सकता है।

सन्दर्भ

1. अद्रीश बनर्जी, इ. हि. क्वा., 27, पृ. 294 ।
2. पराक्रमाधिगत भागीरथ्य जलमूर्द्राभिषिक्तानां दशाश्वमेधावभृत्य स्नातानां भारशिवानां। (का. इ. ई. 3, पृ. 236, 245, पंक्ति 6–7)
3. वाकाटक वंशावली में रुद्रसेन (प्रथम) के मातामह (नाना) भारशिववंशीय राजा भवनाग का निरन्तर उल्लेख किया गया है। मातामहों का उल्लेख सामान्यतः उन्हीं अवस्थाओं में किया जाता है जब उन्होंने अपने दौहित्रों को किसी प्रकार की विशेष सहायता की हो।
4. गुप्त वंशीय प्रभावती गुप्त का विवाह वाकाटक–वंशीय रुद्रसेन (द्वितीय) से हुआ था।
5. सामान्यतः साहित्य में 64 कलाओं के उल्लेख मिलते है, पर इस सूची में 66 हैं।
6. वात्स्यायन कामसूत्र, (काशी संस्त सीरीज), पृ. 29–30।
7. रघुवंश, 19द्य5।
8. वही, 19द्य14।
9. मालविकाग्निमित्र, अंक 1।
10. कुमारसम्भव, 1द्य45।
11. अभिज्ञान शाकुन्तल, अंक 5, मालविकाग्निमित्र, अंक 2।
12. अभिज्ञान शाकुन्तल 1द्य4, 3द्य14, मालविकाग्निमित्र 2द्य4, विक्रमोर्वशीय 2द्य12
13. मेघदूत, 1द्य60, 2द्य26, रघुवंश 2द्य12
14. मालविकाग्निमित्र, 2द्य8
15. रघुवंश, 8द्य33, 19द्य35, मेघदूत, 1द्य26, 49 आदि।
16. पीछे, पृ. 62।
17. रघुवंश, 19द्य35।
18. रघुवंश, 2द्य12, कुमारसम्भव, 1द्य8, मेघदूत, 1।60
19. रघुवंश, 6द्य9, 7द्य63, 64, कुमारसम्भव, 1द्य23
20. रघुवंश, 3द्य39, 6द्य9, 6द्य56, 10द्य76, 16द्य87, विक्रमोर्वशीय, 4द्य12।
21. मेघदूत, 1द्य60, कुमारसम्भव, 6द्य40, मालविकाग्निमित्र, 1द्य22।
22. मेघदूत, 2द्य5, रघुवंश, 19द्य14, मालविकाग्निमित्र, 1द्य21।
23. रघुवंश, 13द्य40, 16द्य13, 16द्य64, मालविकाग्निमित्र, अंक 1।
24. रघुवंश, 10द्य76
25. ऋतुसंहार, 2द्य1, 4
26. आर्कालॉजिकल सर्वे मेमायर, स. 16

9 789334 042405

शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय सागर (म.प्र.)